सजण सुजाणी करे, कडे समी सई न कीयम गाल रे।
ए डुख आंऊं कीं झलींदी, मूंजा केहा हांणे हवाल रे।। ८ ।।

प्रीतम की पहचान करने पर भी कभी सामने बातें नहीं कीं। इस दुःख को मैं कैसे झेलूंगी? अब मेरी क्या हालत होगी?

सूर तोहेजा घणूज सुहामणां, जे तो डिंना रे डंझ।
सूरेनी घणूं सुखाईस, पेई पचारे हाणें मंझ।। ९ ।।

हे प्रीतम! आपका यह दुःख सुहावना लगता है, जो आपने मुझे दिया है। आपका यह दुःख बहुत सुख देने वाला है। इसके बीच मैं पड़ी हूं।

सूर तोहेजा हेडा सुखाला, त तो सुखें हूंदो केहेडो सुख।
पण मूं न सुजातां मूजा सिपरी, आऊं झूरां तेहेजे डुख।। १० ।।

हे प्रीतम! आपका दुःख इतना सुखदाई है तो आपके सुख में कितना सुख होगा, परन्तु मैंने अपने प्रीतम की पहचान नहीं की। उसके दुःख में मैं कलपती हूं।

अंग मूहीं जे अडाए तरारी, झूक करे करियां झोरो।
घोरे बंजां आंजी डिस मथां, त को लाईम सजणे थोरो।। ११ ।।

मैं अपने तन के तलवार से टुकड़े करूं। अग्नि में झोंक दूं और बलिहारी जाऊं (कुरबान जाऊं)। उस दशा में फिर भी प्रीतम के लिए यह थोड़ा है।

हडेनी करियां अंगीठडी, मूजो माहनी होमियां मंझ।
नारियर हंदे ल्हाय रखां मथां, मूंके तोहे न भजेरे डंझ।। १२ ।।

हड्डियों की अंगीठी बनाऊं जिसमें अपने मांस को होम कर दूं। नारियल के स्थान पर मैं अपने सिर की बलि दूं, तो भी मेरा दुःख नहीं जाता।

जरो जरो मूंजे जीव संदो, मूंके विरह पाताऊं वढ।
इंद्रावती चोए चेताय, मूंके माया मंझानी कढ।। १३ ।।

अपने जीव के छोटे-छोटे टुकड़े करके विरह की अग्नि में जला दूं। श्री इन्द्रावतीजी सावधान होकर कहती हैं, हे धनी! मुझे इस तरह की माया से निकालो।

।। प्रकरण ।। ८ ।। चौपाई ।। २२० ।।

चौपाई प्रगटाणी

हवे एक लवो जो सांभरे सही, तो जीव रहे केम काया ग्रही।
सांभलो साथ कहूं विचार, चूक्या अवसर आपण आणी वार।। १ ।।

अब यदि जीव एक शब्द को विचार करे तो इस तन में नहीं रह सकता। हे मेरे सुन्दरसाथ! मैं विचार कर तुमसे कहती हूं कि निश्चय ही हम इस वार भूल कर बैठे हैं।

ए आपण खमीने रह्या, त्यारे वली धणीजीए कीधी दया।
बाई रतनबाईनी वासना, श्री लीलबाईने उदर उपना।। २ ।।

यह हमने सहन कर लिया। इसलिए धनी ने हमारे ऊपर फिर से कृपा की है। लीलबाईजी के उदर से उत्पन्न विहारीजी रतनबाई की वासना है।

श्री देवचंदजी पिता प्रमाण, निरखी आवेस दीधों निरवांण।
नहीं तो ए आवेस छे अपार, पण धणीतणां वचन निरधार।। ३ ।।

श्री देवचन्द्रजी पिता हैं, जिन्होंने बिहारीजी की इच्छा को देखकर अपनी कुछ शक्ति प्रदान की। धनी के वचनों को विचार कर देखें तो आवेश की तो बहुत भारी शक्ति है (जो वचन श्री देवचन्द्रजी कहा करते थे कि जागनी मेहराज ठाकुर के तन से होगी। निश्चय ही वह शक्ति अब मेहराज ठाकुर के तन में आई)।

मारी वाणीए ब्रह्मांडज गले, तो वासना केम वचनथी टले।
वासनाओ माटे बांध्या बंध, कई भांते अनेक सनंध।। ४ ।।

जागृत बुद्धि के ज्ञान की शक्ति से ब्रह्माण्ड का कल्याण होता है, तो वासना उस वाणी से कैसे मुनकिर (इंकार) हो सकती है। इसलिए धनीजी ने ब्रह्मसृष्टि के वास्ते ही तरह-तरह के ढंग से नियम (उपाय) बनाए हैं।

ए वचनों माहें छे निध घणी, आगल प्रगट थासे धणी।
हरखे साथ जागसे एह, रेहेसे नहीं कोई संदेह।। ५ ।।

इन वचनों में अखण्ड ज्ञान छिपा है। आगे धनी फिर से प्रकट होंगे। तब सुन्दरसाथ बड़ी उमंग के साथ जागृत होंगे और उनको कोई संशय नहीं रह जाएंगे।

साथ सकलने तेडूं सही, माया मांहें मूकूं नहीं।
वली वाणी श्री देवचंदजीतणी, साथ सकलने ताणे घर भणी।। ६ ।।

अब मैं (इन्द्रावती) सब साथ को बुलाऊंगी और माया में नहीं छोडूंगी। फिर से धनी देवचन्द्रजी की वाणी सुन्दरसाथ को घर की तरफ खींचती है।

वली तेह चरचा ने तेहज वाण, वचन केहेतां जे प्रमाण।
वृज रास ने वली श्री धाम, सुख साथने दिए निधान।। ७ ।।

साखियां (गवाहियां) दे-देकर उसी तरह की चर्चा, उसी तरह की वाणी, ब्रज, रास तथा परमधाम की, सुनाकर सुन्दरसाथ को (मेहराज ठाकुर) सुख देते हैं।

पचवीस पख वरणवनी जेह, वल्लभ वली सुख आपे तेह।
अंतरध्यान समे जेम थया, वली वालो ततखिण आवया।। ८ ।।

पच्चीस पक्षों का वर्णन जैसा श्री देवचन्द्रजी करते थे, अब वही श्री प्राणनाथजी (मेहराज ठाकुर के तन में बैठकर) सुख देते हैं। जैसे रास में अन्तर्ध्यान के बाद फिर से वालाजी आ गए थे, उसी तरह से श्री प्राणनाथजी श्री देवचन्द्रजी के तन को छोड़कर तत्काल श्री मेहराज ठाकुर के तन में आ गए हैं।

पेहेले फेरे थयूं छे जेम, आंहीं पण वालेजीए कीधूं तेम।
आ ते वालो ने तेहज दिन, विचार करी जुओ तारतम।। ९ ।।

जागृत बुद्धि के ज्ञान से विचार कर देखो तो वालाजी ने जैसा पहले फेरे (रास में) किया था, यहां पर भी उसी तरह किया (एक तन छोड़कर दूसरे तन में आ गए हैं)। यह वही वालाजी हैं और वही समय है।

आ तेह घडी ने तेहज ताल, माया दुष्ट पडी विचाल।
आपणने नव अलगां करे, विना आपण नव डगलूं भरे।। १० ।।

यह वही समय और वही घड़ी है। इस दुष्टा माया ने एक पेंच (वल) बीच में डाल दिया (हम वालाजी की पहचान नहीं कर सके कि वह किस तन में बैठे हैं)। धनी अपने को कभी अलग नहीं करते हैं और हमारे बिना एक पग भी कहीं नहीं जाते।

अधखिण एक नथी थईवार, मायाए विछोडो पाड्यो आधार।
मारकंड माया द्रष्टांत, धणी कने मांगी करी खांत।। ११ ।।

माया ने जो विछोह डाला (जुदाई डाली) उसमें आधे पल की भी देरी नहीं हुई। मार्कण्डेय ऋषि की तरह जिसने अपने परमात्मा से माया देखने की चाह की थी, उसी तरह उसी पल में ही माया देखकर सावधान हो गए।

जोजो मायानो वृतांत, ए अलगी थाय तो उपजे स्वांत।
ततखिण कंपमाण ते थयो, अने माया मांहें भलीने गयो।। १२ ।।

माया का यह हाल देखो। यदि यह माया अलग हो तो शान्ति मिले। उस पल में मार्कण्डेय घबरा (भयभीत) गए और माया में मिल गए।

कल्पांत सात ने छियासी जुग, माया आडी आवी बुध।
नव पडी खबर लगार, रिखीष्वर दुख पाम्यो निरधार।। १३ ।।

सात कल्पान्त और छियासी युग तक माया की बुद्धि में भटकते रहे। इतने समय की उन्हें तनिक भी खबर नहीं हुई और मार्कण्डेय ऋषि ने घोर दुःख देखा।

त्यारे नारायण जी कीधो प्रवेस, देखाडी माया लवलेस।
जुए जागीतां तेहज ताल, दया करी काढ्यो तत्काल।। १४ ।।

तब नारायणजी ने आकर थोड़ी-सी माया दिखाई जिसे देखकर वह जागृत हुए तो देखते हैं कि यह तो वही समय है। दया करके नारायणजी ने उसी समय निकाल लिया।

मायानी तां एह सनंध, निरमल नेत्रे थैए अंध।
ते माटे कीधो प्रकास, तारतमतणो अजवास।। १५ ।।

माया की तो यही असलियत है, जिसे जानकर भी हम अन्धे हो जाते हैं, इसलिए श्री राजजी महाराज ने माया का अन्धकार मिटाकर जागृत बुद्धि का उजाला किया है।

ते लईने आव्या धणी, दया आपण ऊपर छे घणी।
जाणे जोसे माया अलगां थई, तारतमने अजवाले रही।। १६ ।।

हमारे ऊपर धनी की बहुत कृपा है, जो ऐसी जागृत बुद्धि का ज्ञान लेकर आए। उसके ज्ञान रूपी उजाले से सुन्दरसाथ जान सके कि माया से अलग रहकर हम माया देखते हैं।

भले तारतम कीधो प्रकास, सकल मनोरथ सिध्यां साथ।
वचने सर्व अजवालो कर्यो, अने बीजो देह माया मांहें धर्यो।। १७ ।।

धनी ने ऐसा अच्छा तारतम ज्ञान दिया, जिससे हमारी सब मनोकामनाएं सिद्ध हो गईं। इस जागृत बुद्धि के ज्ञान से सब अन्धकार मिट गया। इससे यह स्पष्ट हो गया कि धनी दूसरा तन माया में धारण करके (मेहराज ठाकुर के तन में) आ गए हैं।

।। प्रकरण ।। ९ ।। चौपाई ।। २३७ ।।